Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 3 | ISSN : 2581- 6306

भारत की बहुभाषिकता तथा राष्ट्रभाषा का प्रश्न

मो० फैसल,
शोधार्थी, शिक्षा संकाय,
आई.ए.एस.ई. जामिया मिल्लिया इस्लामिया,
नई-दिल्ली, भारत।

सारांश– जिस प्रकार किसी राष्ट्र की संप्रभुता एवं स्वाभिमान का प्रतीक उसका राष्ट्रीय ध्वज एवं राष्ट्रीय चिन्ह होता है, ठीक उसी प्रकार राष्ट्र की संस्कृति एवं भाषा भी उसके आत्म गौरव और अस्मिता का प्रतीक होती है। यदि हम भारत के परिप्रेक्ष्य में बात करें तो हम पाएंगें कि भारत सम्पूर्ण विश्व में संभवतः सर्वाधिक विविधताओं वाला देश है। ये विविधताएं भौगोलिक होने के साथ-साथ धार्मिक, सांस्कृतिक व भाषाई भी हैं। विस्तृत भू-भाग वाले इस देश में कश्मीर से कन्याकुमारी तक तथा कच्छ से ब्रह्मपुत्र तक हजारों सालों से अनेक समृद्ध भाषाएं व बोलियां बोली-समझी जाती रहीं हैं, जिनकी अपनी-अपनी महत्ता, विशिष्ट शब्द-भंडार एवं साहित्य है। अतः ऐसी स्थिति में हमारे समक्ष यह प्रश्न उठता है कि ऐसे बहुभाषिक देश में किस भाषा को राष्ट्रभाषा का गौरव प्रदान किया जाए ? क्योंकि सभी भाषाएं समृद्ध तथा एक बड़े वर्ग द्वारा बोली-समझी जाने वाली हैं। इस प्रश्न का उत्तर यह कहकर आसानी से दिया जा सकता है कि देश की राष्ट्रभाषा तो वही भाषा हो सकती है जो सम्पूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांध सकने में समर्थ हो तथा जो देश भर की स्वीकार्य भाषा हो। कहना अनुचित न होगा कि निश्चय ही यह दायित्व भारत में सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली हिंदी भाषा ही निभा सकती है। यही कारण है कि महात्मा गाँधी भी हिंदी को ही देश की राष्ट्रभाषा बनाने के प्रबल समर्थक थे किन्तु खेद का विषय है कि अनेक सामाजिक, राजनैतिक कारणों तथा अंग्रेज़ी भाषा के व्यापक प्रभाव के कारण हम आज तक हिंदी को उसका वास्तविक स्थान नहीं दिला सके। अतः प्रस्तुत लेख में इस बात को जानने का प्रयास किया गया है कि क्या वास्तव में हिंदी भाषा में भारत जैसे बहुभाषिक देश की राष्ट्रभाषा बनने की शक्ति है ? और यदि है तो आखिर वह कौन सी समस्याएं हैं जिनके कारणवश हिंदी को अब तक देश में उसका वास्तविक सम्मान नहीं मिल सका ? और आखिर उन समस्याओं का निवारण किस तरह किया जा सकता है ? प्रस्तुत लेख में इन बिंदुओं को भी चर्चा का विषय बनाया गया है।

मुख्य शब्द– हिंदी, संप्रभुता,भारत, राष्ट्रभाषा, बहुभाषिकता, महात्मा गाँधी, राष्ट्रीय, साहित्य।

प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है जो समूह में रहना पसंद करता है। यही समूह जाति व समाज के रूप में आकार लेते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से भाषा समाज द्वारा विकसित विचारों के आदान-प्रदान का एक साधन होती है। प्रत्येक समाज अपने विचारो का आदान-प्रदान करने के लिए भाषा का ही आश्रय लेता है। प्रसिद्ध भाषाशास्त्री डॉ० बाबूराम सक्सेना ने बड़े ही सरल शब्दों में भाषा के अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए लिखा है- "वह साधन जिसके द्वारा एक प्राणी दूसरे प्राणी पर अपने भाव, विचार या इच्छा प्रकट करता है, भाषा कहलाती है।"

जिस प्रकार किसी राष्ट्र की संप्रभुता एवं स्वाभिमान का प्रतीक उसका राष्ट्रीय ध्वज एवं राष्ट्रीय चिन्ह होता है, ठीक उसी प्रकार राष्ट्र की संस्कृति एवं भाषा भी उसके आत्म गौरव और अस्मिता का प्रतीक होती है। प्रत्येक देश अपनी राष्ट्रभाषा को अपना कर ही उन्नति करता है। चीन, जापान, इंग्लैंड जैसे देश इसके उदाहरण हैं। एक राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधे रखने में भी राष्ट्रभाषा की महत्ता को नकारा नहीं जा सकता। विश्व में अनेकों देश जैसे जापान, चीन, इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी, बांग्लादेश आदि तो अपनी-अपनी राष्ट्रभाषाओं के नाम से ही सम्पूर्ण विश्व में जाने जाते हैं। यदि हम भारत के परिप्रेक्ष्य में बात करें तो हम पाएंगें कि भारत सम्पूर्ण विश्व में संभवतः सर्वाधिक विविधताओं वाला देश है। ये विविधताएं भौगोलिक होने के साथ-साथ धार्मिक, सांस्कृतिक व भाषाई भी हैं किन्तु सांस्कृतिक दृष्टि से भारत एक इकाई है। विभिन्नता में एकता भारत की दुर्बलता न होकर इसकी शक्ति है। भाषाई विविधता की दृष्टि से तो भारत एक अद्भुत देश के रूप में उभर कर सामने आता है। विस्तृत भू-भाग वाले इस देश में कश्मीर से कन्याकुमारी तक तथा कच्छ से ब्रह्मपुत्र तक हजारों सालों से अनेक समृद्ध भाषाएं व बोलियां बोली समझी जाती रहीं हैं, जिनकी अपनी-अपनी महत्ता, विशिष्ट शब्द-भंडार एवं साहित्य है। यही कारण है कि भारत में एक कहावत बहुत प्रसिद्ध है- "कोस कोस पे पानी बदले चार कोस पे वाणी।"

यदि हम भारतीय संविधान के परिप्रेक्ष्य में भारत की भाषाई विविधता को समझने का प्रयास करें तब हमको ज्ञात होगा कि भारतीय संविधान की 8 वी अनुसूची में 22 भारतीय भाषाओं को शामिल किया गया है जो इसप्रकार हैं- पंजाबी, संस्कृत, गुजराती, हिंदी, उर्दू, सिंधी, कश्मीरी, कन्नड़, डोंगरी, कोंकणी, मलयालम, मणिपुरी, असमिया, बंगाली, बोडो, मराठी, मैथिली, नेपाली, उड़िया, संथाली, तमिल, तेलुगु।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 344 के अन्तर्गत प्रारम्भ में केवल 15 भाषाओं को ही राजभाषा या आधिकारिक भाषा की मान्यता प्रदान की गयी थी। 21 वे संविधान संशोधन (सन्1967) द्वारा सिंधी को, फिर 71 वे संविधान संशोधन (सन्1992) द्वारा नेपाली, कोंकणी व मणिपुरी को तथा 92 वे संविधान संशोधन अधिनियम (सन् 2003) के द्वारा इस सूची में 4 नई भाषाओं- बोडो, डोंगरी, मैथिली तथा संथाली को भी राजभाषा का दर्जा प्रदान किया गया है। अतः ऐसी स्थिति में हमारे समक्ष यह प्रश्न उठता है कि ऐसे बहुभाषिक देश में किस भाषा को राजभाषा व राष्ट्रभाषा का गौरव प्रदान किया जाए ? क्योंकि सभी भाषाएं समृद्ध तथा एक बड़े वर्ग द्वारा बोली-समझी जाने वाली हैं परन्तु इस प्रश्न का उत्तर हम यह कहकर आसानी से दे सकतें हैं कि देश की राष्ट्रभाषा तो वही भाषा हो सकती है जो सम्पूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांध सके तथा जो देश भर की स्वीकार्य भाषा हो। कहना अनुचित न होगा कि निश्चय ही यह दायित्व भारत में सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली हिंदी भाषा ही निभा सकती है।

भारत का इतिहास साक्षी रहा है कि जब कभी भी देश में किसी बड़े जन-जागरण आंदोलन की शुरुआत हुई या किसी धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक लोकनायकों ने सम्पूर्ण देश को एक साथ संबोधित करने का प्रयास किया, तब-तब उन आंदोलनों व लोकनायकों ने उस काल की संपर्क भाषा को ही चुनकर जनता के दिलों तक पहुंचने का प्रयास किया जिसमें वे काफी हद तक सफल भी हुए। इस संदर्भ में आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानंद सरस्वती व देश के राष्ट्रपिता मोहनदास करमचंद गाँधी का उद्धरण देना आवश्यक प्रतीत होता है। ये दोनों ही मूलतः गुजराती थे यानी दोनों की ही मातृभाषा हिन्दी नहीं थी लेकिन इन दोनों ने ही देश में हिंदी भाषा की शक्ति को महसूस करके अपने-अपने जन-आंदोलनों में हिंदी को ही जनता के निकट पहुंचने का माध्यम बनाया। कहना अनुचित न होगा कि आर्य समाज ने देश में विशेषकर दक्षिण भारत में हिंदी के मान-सम्मान को बढ़ाने में विशेष भूमिका निभाई। महात्मा गाँधी तो हिंदी को ही देश की राष्ट्रभाषा बनाने के प्रबल समर्थक थे। यद्यपि गाँधी जी अंग्रेज़ी के बहुत अच्छे ज्ञाता थे परन्तु सन् 1918 ई० में उन्होने खुले तौर पर यह घोषणा कर दी थी कि "दुनिया से कह दो कि गाँधी अंग्रेज़ी भूल गया।" गाँधी जी 1918 ई० के बाद में मानो सच में अंग्रेज़ी भूल गए और इसके बाद वह देश-विदेश जहां भी गए, उन्होने संबोधन हिंदी में ही किया। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि महात्मा गांधी हिंदी के उस रूप को देश की राष्ट्रभाषा बनाने के समर्थक थे जो अपने ठेठ पन के साथ साथ अरबी-फारसी के शब्दों सहित विभिन्न देशज-विदेशक भाषाओं की खुशबू लिए हुए हो। वे हिंदी को हिन्दुस्तानी कहते थे, यानी हिंदुस्तान के लोग जिस बोल चाल की भाषा का इस्तेमाल करते हैं वही उनकी हिंदी थी। महात्मा गांधी का यह विचार हिंदी को विस्तृत फलक प्रदान कर हिंदी को जन भाषा के पद पर आसीन करता है।

प्रस्तुत लेख में इस बात को जानने का प्रयास किया गया है कि क्या वास्तव में हिंदी भाषा में देश की राष्ट्रभाषा बनने की शक्ति है ? और यदि है तो आखिर वह कौन सी समस्याएं हैं जिनके परिणाम स्वरूप हिंदी को अब तक देश में उसका वास्तविक सम्मान नहीं मिल सका ? और आखिर उन समस्याओं का निवारण किस तरह किया जा सकता है ? प्रस्तुत लेख में इन बिंदुओं को भी चर्चा का विषय बनाया गया है।

राजभाषा और राष्ट्रभाषा में अंतर

राजभाषा से अभिप्राय देश के संविधान द्वारा स्वीकृत उस भाषा से है जिसमें संघीय सरकार अपना काम-काज करती है अर्थात् जो संवैधानिक तौर पर घोषित सरकारी कामकाज की भाषा होती है। इसप्रकार हम कह सकते हैं कि किसी देश का सरकारी कामकाज जिस भाषा में करने का कोई निर्देश संविधान के प्रावधानों द्वारा दिया जाता है, वह उस देश की राजभाषा कही जाती है, जबकि किसी देश की राष्ट्रभाषा उस देश के बहुसंख्यक लोगो की भाषा को माना जाता है। जब कोई भाषा अपने महत्व के कारण राष्ट्र के विस्तृत भू-भाग में जनता द्वारा अपना ली जाती है तो वह स्वतः राष्ट्रभाषा का पद प्राप्त कर लेती है। राजभाषा जहां संवैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त भाषा को ही माना जाता है, वहीं राष्ट्रभाषा का देश के संविधान से कोई लेना देना नहीं होता है।

चूँकि हिंदी भाषा भारत में अंग्रेज़ी तथा अन्य प्रादेशिक भाषाओं में सर्वाधिक प्रयोजन सिद्ध भाषा है, अतः भारतीय संविधान में संघीय भाषा के रूप में हिंदी को राजभाषा का दर्जा देते हुए इसके पठन-पाठन की व्यवस्था पर विशेष जोर दिया गया है। हिंदी भारत की राजभाषा तो है ही, साथ ही भारत के बहुसंख्यक लोगों की भाषा होने के कारण राष्ट्रभाषा भी स्वत: बन जाती है। केंद्र सरकार की राजभाषा होने के अतिरिक्त भारत के 10 राज्यों की राजभाषा के रूप में भी हिंदी का प्रयोग स्वीकृत है। यह 10 राज्य हिंदी-प्रदेश कहलाते हैं जो इसप्रकार हैं- हिमाचल-प्रदेश, हरियाणा, उत्तरांचल, दिल्ली, उत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, राजस्थान, बिहार, झारखंड और छत्तीसगढ़। इन राज्यों के अतिरिक्त अन्य राज्यों ने अपनी-अपनी प्रादेशिक भाषाओं को राजभाषा का सम्मान प्रदान किया है यथा- पंजाब की राजभाषा पंजाबी, बंगाल की राजभाषा बंगाली, आंध्रप्रदेश की राजभाषा तेलुगु, तमिलनाडु की राजभाषा तमिल, कर्नाटक की राजभाषा कन्नड़, केरल की राजभाषा मलयालम है। यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि इन राज्यों में भी सरकारी कामकाज प्रांतीय भाषाओं में होने के साथ-साथ अंग्रेज़ी में भी हो रहा है।

राजभाषा हिंदी की संवैधानिक स्थिति

भारत में मुगल काल में फारसी भाषा को राजभाषा होने का दर्जा प्राप्त था। मुगलकाल के पश्चात जब अंग्रेज भारत में आए तब उन्होने अपनी भाषा एवं संस्कृति को भारत पर थोपा और अंग्रेज़ी भाषा को शासन की भाषा होने का गौरव प्रदान किया गया, परंतु जब हमारा देश 15 अगस्त 1947 ई० को स्वतंत्र हुआ तब आज़ाद भारत की राजभाषा किसे बनाया जाए ? यह प्रश्न प्रकाश में आया। जब भारत के संविधान का निर्माण किया जा रहा था तब संविधान सभा के सम्मुख एक महत्वपूर्ण प्रश्न यह था कि भारत की राष्ट्रभाषा किस भाषा को बनाया जाए ? जिसको लेकर संविधान सभा में काफी गहरे मतभेद थे। उस समय स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने वाले हिंदी प्रदेशों के लगभग सभी बड़े नेताओं जैसे पुरुषोत्तम दास टंडन, रविशंकर शुक्ल, संपूर्णानंद, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद आदि की एक समान राय यही थी कि हिंदी को ही भारत की राष्ट्रभाषा बनना चाहिए और वे सभी हिंदी को ही राष्ट्रभाषा बनाने के पक्षधर थे लेकिन दक्षिण भारत के कुछ बड़े नेताओं जैसे टी०टी० कृष्णमाचारी, एन. गोपालस्वामी अयंगर आदि ने हिंदी का तीखा विरोध किया और अंत में एक बीच का रास्ता निकाला गया जिसको 'मुंशी अयंगर फॉर्मूला' के नाम से जाना जाता है। इसप्रकार पर्याप्त विचार-विमर्श के उपरांत 14 सितंबर 1949 ई० को संविधान सभा ने एक मत होकर यह निर्णय लिया कि हिंदी भारत की राजभाषा होगी। यही कारण है कि हम लोग प्रति वर्ष 14 सितंबर को 'हिंदी दिवस' के रूप में मनातें हैं।

संविधान में राजभाषा संबंधित अनुच्छेद भाग-17 के अध्याय-1 में धारा 343 से 351 तक हैं। संविधान के भाग-17 के अध्याय-1 की धारा 343 (1) के अनुसार- "संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी। संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा।" किन्तु इसी धारा में अनुच्छेद 343 (2) के अन्तर्गत यह प्रावधान भी किया गया कि संविधान के आरम्भ होने से 15 वर्ष की कालावधि तक यानी 25 जनवरी, 1965 तक उन सभी राजकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेज़ी भाषा का प्रयोग भी हिंदी के साथ-साथ होता रहेगा जिसके लिए वह पहले से प्रयुक्त होती आ रही है और जब तक हिंदी पूरी तरह राजभाषा के रूप में पूरे देश में स्वीकार्य न कर ली जाए। अनुच्छेद 343 (3) में संसद को यह अधिकार दिया गया है कि वह कानून बनाकर सरकारी कार्यों के लिए अंग्रेज़ी के निरंतर प्रयोग को 25 जनवरी 1965 के बाद भी जारी रख सके। निश्चय ही इस पूरी व्यवस्था में राजभाषा हिंदी की केंद्रीय भूमिका और अंग्रेजी भाषा की सहायक भूमिका की परिकल्पना निहित थी।

भारतीय संविधान 26 जनवरी 1950 ई० को लागू हुआ, अतः 15 वर्षों की अवधि 26 जनवरी 1965 ई० को समाप्त हो गई किन्तु खेद का विषय है कि अनेक सामाजिक, राजनैतिक कारणों तथा अंग्रेज़ी भाषा के व्यापक प्रभाव के कारण सरकार ने इस अवधि को अनिश्चित काल के लिए आगे बढ़ा दिया। परिणामत: राजभाषा हिंदी को व्यावहारिक रूप में उसका वास्तविक दर्जा न मिल सका तथा अब भी हिंदी को भारत की राजभाषा होने के बावजूद अंग्रेज़ी से मुकाबला करना पढ़ रहा है। अंग्रेज़ी भारतीय संविधान द्वारा भले ही किसी राज्य की राजभाषा स्वीकार्य न की गई हो, किन्तु व्यावहारिक

रूप में उसका प्रयोग एक बहुत बड़े सरकारी वर्ग द्वारा राजकीय कार्यों जैसे- प्रस्ताव, सामान्य-आदेश, नियम, अधिसूचना, प्रेस-विज्ञप्तियां, शासकीय और अन्य रिपोर्ट, लाइसेंस-परमिट, ठेका आदि के लिए अभी भी जारी है और वह अभी तक अपना वर्चस्व स्थापित किए हुए है। साथ ही हमारी शिक्षण संस्थाओं और शैक्षिक व्यवस्थाओं में भी हिंदी भाषा को हीनता से देखने की प्रवृत्ति विकसित हुई है। यद्यपि कहने को तो हिंदी केंद्र सरकार की राजभाषा स्वीकार्य है तथा केंद्र सरकार के कामकाज में अधिक से अधिक हिंदी का प्रयोग होना चाहिए किन्तु आज भी भारत में उच्चतम व उच्च न्यायालय में सुनवाई व अन्य कार्यवाहियां अंग्रेज़ी में ही संपन्न होती है जो किसी भी प्रकार से उचित नहीं है।

हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा क्यों नहीं बन सकती ?

यद्यपि कहने को तो हमने 15 अगस्त 1947 ई० को अंग्रेज़ो से भौतिक स्वतंत्रता प्राप्त कर ली थी परंतु यह एक कटु सत्य है कि मानसिक रूप से हम आज भी पाश्चात्य संस्कृति व सभ्यता के गुलाम ही हैं। हमारा खान-पान, रहन-सहन, भाषा-भूषा आज भी पाश्चात्य संस्कृति से प्रभावित दिखाई देती है। आज भी हम अंग्रेज़ी के वर्चस्व तले दबे हुए हैं। यद्यपि महात्मा गांधी का स्पष्ट मत था कि बिना राष्ट्रभाषा के कोई भी राष्ट्र गूंगा होता है और भारत की राष्ट्रभाषा बनने की शक्ति हिंदी में ही है परन्तु यह हमारे देश का दुर्भाग्य ही है कि आज भी देश में हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने के प्रश्न पर अनेक राजनैतिक दल व अंग्रेज़ी सभ्यता से प्रभावित लोग हिंदी के विरोध में खड़े हो जाते हैं और हिंदी का खुलकर विरोध करते हैं। यहां दिलचस्प बात यह है कि उनका यह हिंदी-विरोध अन्य किसी प्रादेशिक भाषा के मोह के कारण नहीं बल्कि अंग्रेज़ी के अनुराग के कारण अधिक दिखाई देता है। आज भी बहुत से हिंदी-विरोधी हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने के मार्ग में बाधा उत्पन्न करते हैं तथा वे हिंदी का विरोध करते हुए निम्नलिखित तर्क देते हैं जो इसप्रकार है-

1. भारत एक बहुभाषी देश है। यहां हज़ारों सालों से अनेक समृद्ध भाषाएं व बोलियां बोली-समझी जाती हैं, जिनकी अपनी-अपनी महत्ता, विशिष्ट शब्द-भंडार व साहित्य है। अतः यहां किसी एक भाषा को राष्ट्रभाषा नहीं बनाया जा सकता।
2. भारत को संविधान में 'यूनियन ऑफ स्टेट्स' कहा गया है क्योंकि यह अनेक छोटे-बड़े राज्यों से मिलकर बना है। सभी राज्यों की अपनी-अपनी भाषा-संस्कृति है। अतः इसकी तुलना चीन, जापान, कोरिया आदि देशों से नहीं की जा सकती।
3. भारत में ही हिंदी से पुरानी अनेकों भाषाएं हैं जैसे- तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम, मराठी, बांग्ला, सिंधी, कश्मीरी आदि। ऐसे में हिंदी के रूप में एक नई भाषा को राष्ट्रभाषा बना देना इन प्राचीन भाषाओं के साथ अन्याय होगा।

4. भारत के 29 राज्यों में से 20 राज्य तो अहिंदी प्रदेश ही हैं जहां हिंदी के माध्यम से संपर्क स्थापित नहीं किया जा सकता क्योंकि इन प्रदेशों में हिंदी बोलने-समझने वालों की संख्या बहुत कम है। इन प्रदेशों की अपनी-अपनी प्रादेशिक भाषा व बोलियां है।
5. अक्सर कहा जाता है कि करीब 125 करोड़ की जनसंख्या वाले भारत में 50 प्रतिशत से अधिक लोग हिंदी भाषी है, साथ ही गैर हिंदी जनसंख्या में भी करीब 20 फीसदी लोग हिंदी समझते हैं इसलिए हिंदी भारत की आम जनभाषा है लेकिन कई भाषाविदों का कहना है कि यद्यपि हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, राजस्थान, बिहार, झारखंड, छत्तीसगढ़ के लोगों को हिंदी भाषी लोगों में गिन लिया जाता है परन्तु उनमें भी अधिकतर लोग हिंदी भाषी नहीं हैं, बल्कि उनकी भाषा जनजातीय या क्षेत्रीय है।
6. वर्तमान समय में उच्च शिक्षा प्राप्ति का माध्यम ही अंग्रेज़ी भाषा है। ऐसे में हिंदी को राष्ट्रभाषा नहीं बनाया जा सकता।
7. यदि उच्च शिक्षा में हिंदी का प्रयोग कर भी लिया जाए तो भी अधिकतर महत्वपूर्ण ग्रंथ अंग्रेज़ी भाषा में ही उपलब्ध है। निस्संदेह वैज्ञानिक, प्रौद्योगिक, व्यवसयिक आदि क्षेत्रों में नई खोजों, नए विचारों की भाषा प्राय: अंग्रेज़ी होती है क्योंकि अंग्रेज़ी सबसे उन्नत देश अमेरिका की भाषा है इसलिए ज्ञान-विज्ञान की जितनी पुस्तके, पत्रिकाएं अंग्रेज़ी में उपलब्ध है उतनी दूसरी किसी अन्य भाषा में नहीं।
8. अंग्रेज़ी को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है। बहुत से लोग भारत से शिक्षा व रोज़गार की तलाश में विदेश भी जाते हैं। ऐसी स्थिति में निश्चय ही अंग्रेज़ी उनके लिए अधिक सहायक सिद्ध होती है।
9. हिंदी में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की परम्परा के अभाव के कारण वैज्ञानिक शब्दावली का भी अभाव है। इसीकारण हिंदी तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दावली के लिए अन्य भाषाओं की तरफ देखती है।
10. अंग्रेज़ी भाषा की वर्णमाला चूंकि छोटी होती है इसलिए इसका प्रयोग कंप्यूटर टाइपिंग में आसानी से किया जा सकता है।
11. चूंकि अंग्रेज़ी भारत में शासकों की भाषा रही है, अतः अंग्रेज़ी सभ्यता व संस्कृति से प्रभावित कुछ लोग अंग्रेज़ी को भारत में सभ्य लोगो की भाषा जबकि हिंदी को गवारो व चपरासियों की भाषा कहकर संबोधित करते हैं। इस सन्दर्भ में सर सैयद अहमद खान (अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के संस्थापक) जैसे अंग्रेज़ी परस्त लोगों का नाम लिया जा सकता है।
12. आज हमको सामान्यतः हिंदी के दो रूप देखने को मिलते हैं- एक आम जनता की बोलचाल वाली सरल हिंदी और दूसरी अकादमिक संस्थानों और कार्यालयों में प्रयुक्त हिंदी। हिंदी का साहित्यिक व कामकाजी रूप काफी कठिन व संस्कृतनिष्ठ होता है। अतः हिंदी के विरोधी अक्सर हिंदी के इस कठिन रूप का दुष्प्रचार करके हिंदी का विरोध करते देखे जाते हैं।

दक्षिण भारत में हिंदी विरोधी आंदोलन का खूनी इतिहास

हाल ही में 14 सितंबर 2019 को हिंदी दिवस के शुभ अवसर पर भारत के वर्तमान गृहमंत्री अमित शाह ने एक ट्वीट करके कहा कि "भारत विभिन्न भाषाओं का देश है। हर भाषा का अपना महत्व है परन्तु पूरे देश की एक भाषा होना अत्यंत आवश्यक है जो विश्व में भारत की पहचान बने।" इसके बाद उन्होंने एक और ट्वीट करके कहा कि "आज देश को एकता की डोर में बाँधने का काम अगर कोई एक भाषा कर सकती है तो वो सर्वाधिक बोले जाने वाली भाषा हिंदी ही है।" इसप्रकार उन्होने हिंदी को भारत की पहचान से जोड़ने का काम करते हुए हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकारने की वकालत की, परन्तु जैसे ही गृहमंत्री ने यह ट्वीट किए, उसके तुरंत बाद ही तमिलनाडु से इसके विरोध में पहली कड़ी प्रतिक्रिया देखने को मिली। एम० के० स्टालिन ने एक तरह से धमकी देते हुए ट्वीट किया- "This is India, Not Hindia." स्टालिन ने यहां तक कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी को इस पर अपनी सफाई देनी चाहिए। केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह के द्वारा देश की राष्ट्रभाषा पर दिए गए बयान के बाद राजनीतिक घमासान यहाँ भी नहीं रुका और साउथ के सुपरस्टार और राजनेता कमल हासन भी इस भाषा विवाद में कूद पड़े और हिंदी की तुलना अन्य भारतीय भाषाओं से कर डाली जिसमें उन्होंने हिंदी को अन्य भारतीय भाषाओं की तुलना में "A Little Child In Diapers" तक कह डाला जो निश्चय ही उनके हिंदी विरोध को दर्शाता है। यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि हिंदी को लेकर जब कभी भी कोई प्रश्न खड़ा होता है तो उसको लेकर सबसे पहले व सबसे तीखी प्रतिक्रिया तमिलनाडु से ही आती है और इसका पूरा अपना एक इतिहास है। यहां बताते चलें कि तमिलनाडु भारत का एक ऐसा राज्य है जो आजतक हिंदी को स्वीकार्य नहीं कर पाया है। वहां के लोगों को ऐसा लगता है कि उत्तर भारतीय हिंदी को उन पर ज़बरदस्ती थोपना चाहते हैं जबकि उनकी तमिल भाषा का इतिहास विकास की दृष्टि से संस्कृत भाषा से भी पुराना है।

ऐसा नहीं है कि वर्तमान बीजेपी सरकार ने पहली बार हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने का प्रयत्न किया है। ऐसे असफल प्रयास पहले भी कई बार हो चुके है। इसको समझने के लिए इतिहास में थोड़ा पीछे जाना होगा जब सन् 1918 ई० में महात्मा गांधी ने मद्रास में 'दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा' का गठन किया था तथा जिसके माध्यम से उन्होने पहली बार तमिल व अन्य दक्षिण भारतीय क्षेत्रों में हिंदी का प्रचार-प्रसार करने का प्रयास किया था। महात्मा गांधी मानते थे कि हिंदी ही भारत की वह भाषा है जो सम्पूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांध सकती है। सन् 1937 में कांग्रेस तमिलनाडु (मद्रास प्रेसीडेंसी) में चुनाव जीतकर सत्ता में आई थी और उस समय चक्रवर्ती राज गोपालाचारी वहां के मुख्यमंत्री बने थे। वह गांधी जी के बहुत करीबी माने जाते थे। उस समय उन्होने मुख्यमंत्री होने के नाते हिंदी को तमिलनाडु के सरकारी स्कूलों में अनिवार्य करने की कोशिश की थी बल्कि कहना गलत न होगा कि अनिवार्य कर ही दिया था, जिसकी बहुत तीखी प्रतिक्रिया पूरे दक्षिण प्रदेश में देखने को मिली थी। उस समय जिस व्यक्ति ने हिंदी का सबसे ज़्यादा विरोध किया था या कहना गलत न होगा

कि हिंदी-विरोधी आंदोलन का नेतृत्व किया था, उसका नाम था- 'ई० वी० रामास्वामी पेरियार'। यह आंदोलन लगभग सन् 1937 से 1940 ई० तक चला, जिसमें 2 लोगों की मृत्यु हुई और लगभग 1200 लोगों को गिरफ्तार किया गया था। चक्रवर्ती राज गोपालाचारी भी एक ज़िद्दी व्यक्ति थे। उन्होने इस खूनी आंदोलन के बावजूद भी अपने इस निर्णय को वापिस नहीं लिया और सन् 1939 ई० में अपने पद से इस्तीफा दे दिया। सन् 1940 ई० में अंग्रेज़ो ने हस्तक्षेप करके हिंदी की अनिवार्यता के इस निर्णय को रद्द कर दिया जिसके बाद यह आंदोलन शांत हुआ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात जब भारत के संविधान का निर्माण किया जा रहा था तब संविधान सभा में भारत की राष्ट्रभाषा को लेकर एक बड़ी बहस हुई। उस समय उत्तर भारत के जितने भी बड़े नेता थे उन सभी की एक समान राय यही थी कि हिंदी को राष्ट्रभाषा बनना चाहिए किन्तु दक्षिण भारत के नेताओं ने हिंदी का तीखा विरोध किया और अंत में एक बीच का रास्ता निकाला गया जिसको मुंशी 'आयंगर-फॉर्मूला' कहा जाता है, जिसके तहत संविधान लागू होने के 15 साल तक अंग्रेज़ी भी हिंदी के साथ-साथ आधिकारिक भाषा होगी और 5 साल बाद एक 'भाषा-आयोग' का गठन किया जाएगा जो इस बात को सुनिश्चित करेगा कि हिंदी को पूरे देश में कैसे लागू किया जाए ? अतः सन् 1955 ई० में खैर साहब की अध्यक्षता में भाषा-आयोग का गठन हुआ और उन्होने अपनी रिपोर्ट भी दी। उस समय भाषा की संसदीय कमेटी जिसके अध्यक्ष 'पंडित गोविंद वल्लभपंत' थे, उन्होने 'खैर-आयोग' की रिपोर्ट का 2 साल तक अध्ययन किया और फिर अपने प्रावधान प्रस्तुत किए जिसके तहत हिंदी को प्राथमिक आधिकारिक भाषा व अंग्रेज़ी को द्वितीय आधिकारिक भाषा बना देना चाहिए। इसप्रकार हम कह सकते है कि पंत-कमिशन ने यह स्पष्ट कर दिया था कि आने वाले दिनों में हिंदी राष्ट्रभाषा बन जाएगी और अंग्रेज़ी धीरे-धीरे गायब हो जाएगी। यहां एक दिलचस्प बात यह है कि वही चक्रवर्ती राज गोपालाचारी जिन्होने सन् 1937 ई० में तमिलनाडु में हिंदी को अनिवार्य किया था, सन् 1963 आते-आते वहीं पंडित गोविंद वल्लभपंत के विरोध में खड़े हो गए। विरोध बढ़ता देखकर जवाहरलाल नेहरू को संसद में स्पष्ट करना पड़ा कि अंग्रेज़ी अनिश्चित काल तक देश की आधिकारिक भाषा बनी रहेगी जिसपर गोविंद वल्लभपंत बहुत नाराज़ भी हुए और कहा था कि जो कुछ भी मैंने भाषा को लेकर विगत 2 सालों में अर्जित किया, उस पर पंडित नेहरू ने 2 मिनट में पानी फेर दिया।

यहां ध्यान देने योग्य बात यह है कि उस समय विरोध सिर्फ तमिलनाडु में ही नहीं बल्कि आंध्रप्रदेश के तेलुगु इलाके में भी हुआ था। लोगो को लगने लगा था कि नेहरू उनसे झूठ बोल रहे है और हुआ भी कुछ ऐसा ही जब सन् 1965 में हिंदी को एकमात्र राजभाषा घोषित कर दिया गया। उस समय विरोध एक बार फिर से बहुत अधिक बढ़ गया जिसमें 70 लोगों की मृत्यु हो गयी थी और बहुत बड़े स्तर पर सार्वजानिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाया गया था। चूँकि उस समय तक नेहरू की मृत्यु हो

चुकी थी और लाल बहादुर शास्त्री देश के प्रधानमंत्री थे, अतः उनको यह बयान देना पड़ा कि हिंदी के साथ-साथ अंग्रेज़ी भी देश की आधिकारिक भाषा रहेगी और इसतरह हिंदी के साथ-साथ अंग्रेज़ी को भी अनिश्चितकाल के लिए देश की आधिकारिक भाषा घोषित कर दिया गया लेकिन 26 जनवरी 1965 को हिंदी को देश की एकमात्र आधिकारिक भाषा बनाने का जो काम किया गया था उसकी कांग्रेस पार्टी को बहुत बड़ी कीमत भी चुकानी पड़ी और सन् 1967 के विधानसभा चुनाव में कांग्रेस पार्टी बुरी तरह से तमिलनाडु में हार गई और इस प्रकार डी. एम. के. पार्टी जो तमिलनाडु में हिंदी विरोधी आंदोलन का नेतृत्व कर रही थी, सत्ता में आती और तब से लेकर आज तक कभी भी कांग्रेस पार्टी तमिलनाडु में अपने बल पर सत्ता में नहीं आ सकी। यहां एक अन्य घटना की तरफ ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ। जब 2019 में भाजपा पार्टी सत्ता में आती है तो समाचार पत्रों के माध्यम से एक समाचार प्रकाश में आता है कि सरकार नई शिक्षा नीति लेकर आ रही है जिसके तहत देश के सभी स्कूलों में हिंदी को अनिवार्य किया जाएगा। हालांकि इस बात की पुष्टि पूरी तरह नहीं हुई थी लेकिन जैसे ही यह खबर प्रकाश में आती है तमिलनाडु में एक बार फिर से हिंदी का विरोध होना शुरू हो जाता है। जहाँ एक ओर स्टालिन व तत्कालीन मुख्यमंत्री कुमारस्वामी इसका विरोध करते है, वहीँ दूसरी ओर बंगाल की मुख्यमंत्री ममता बनर्जी व तेलंगाना से असदुद्दीन ओवैसी जैसे अहिन्दी प्रदेश के बड़े नेताओं ने भी सरकार के इस निर्णय का जमकर विरोध किया। चूंकि नई शिक्षा नीति का प्रारूप 'कस्तूरी रंजन' ने तैयार किया था, अतः उनको ही आगे आकर स्पष्ट करना पड़ा कि ऐसा कोई प्रयास नहीं किया जाएगा जिसके तहत हिंदी को गैर हिंदी भाषी लोगों पर थोपा जाए जब तक कि उनकी रजामंदी नहीं होगी।

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि यद्यपि हिंदी की महत्ता को आज सम्पूर्ण विश्व स्वीकार्य कर रहा है परन्तु दुर्भाग्यवश अपने ही घर में हिंदी को अपमान झेलना पड़ता है। पूर्वोत्तर व दक्षिण के राज्यों से हिंदी की दूरी आज भी एक चुनौती बनी हुई है जिनकी स्वीकार्यता के बिना हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने का सफर पूरा नहीं हो सकता।

हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने हेतु कुछ सुझाव

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि यद्यपि भारत के संविधान में हिंदी को संघ की राजभाषा होने का गौरव प्राप्त है और भारत में यह बहुसंख्यक वर्ग की भाषा भी है परन्तु एक कटु सत्य यह भी है कि आज तक हम हिंदी को उसका वास्तविक संवैधानिक सम्मान नहीं दिला सके है। जब कभी भी देश में हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने की कोशिश होती है तब अनेक राजनेता हिंदी को अपनी गंदी राजनीति का शिकार बना लेते हैं। यद्यपि भारत में आज हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने के मार्ग में अनेक समस्याएं मौजूद हैं परन्तु इनका निवारण कठिन अवश्य है, असंभव नहीं। आज हम हिंदी की इन समस्याओं का समाधान निम्नलिखित बिन्दुओं को ध्यान में रखकर निकाल सकते है-

1. हिंदी के राष्ट्रभाषा बनने के मार्ग में अंग्रेज़ी एक बहुत बड़ी रुकावट बनी हुई है। आज भारत में अंग्रेज़ी इस प्रकार पढ़ी-पढ़ाई जाती है मानो हम सब लंदन के निवासी हो। अंग्रेज़ी के अनुराग में हम इतने अधिक अनुरक्त हो गए कि हमने अंग्रेज़ी को अतिथि बनाने के स्थान पर गृहस्वामिनी ही बना डाला है। अंग्रेज़ो के जाते समय देश में अंग्रेज़ी की जितनी महत्ता थी उससे कहीं अधिक आज है। हमको सोचना चाहिए कि क्या हमारा अंग्रेज़ी अनुराग देश के उत्थान के लिए सहायक सिद्ध हुआ है या इस विदेशी भाषा पर अधिकार करने के अर्द्धसफल या असफल प्रयास में हम पीढ़ी दर पीढ़ी अपार ऊर्जा गंवा नहीं रहे ? भारत को यदि अपने व्यापक पिछड़ेपन से उभरना है, विभिन्न वर्गों की घोर असमानता यदि कम करनी है तो ज़रूरी है कि हम आम आदमी को उसी की भाषा में शिक्षा और शासन दे जैसा कि हर विकसित देश में होता है।
2. किसी भी देश की राष्ट्रभाषा केवल उस देश की निज भाषा ही बन सकती है क्योंकि निज भाषा से ही देशवासियों की भावनाएं जुड़ी हुई होती हैं। अतः इस दृष्टि से स्पष्ट हो जाता है कि देश की राष्ट्रभाषा अंग्रेज़ी उसी प्रकार नहीं हो सकती जिस प्रकार इंग्लैंड की राष्ट्रभाषा हिंदी या कोई अन्य विदेशी भाषा नहीं हो सकती।
3. कुछ हिंदी-विरोधी अक्सर यह तर्क देते सुने जा सकते हैं कि भारत जैसे बहुभाषिक देश में जहां अनेक भाषाएं बोली समझी जाती हैं वहां किसी एक भाषा को देश की राष्ट्रभाषा किस प्रकार बनाया जा सकता ? इसका उत्तर तो स्पष्ट है कि उस भाषा को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन किया जाना चाहिए जो सम्पूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांध सकने में समर्थ हो। भारत में बोली जाने वाली अनेक भाषाओं में से जिस भाषा में भी यह सामर्थ हो उसी को राष्ट्रभाषा घोषित कर देना चाहिए। निश्चय ही यह दायित्व भारत में सर्वाधिक प्रयोग की जाने वाली हिंदी भाषा ही निभा सकती है।
4. यद्यपि भारत में तमिल, तेलुगु जैसी अनेक समृद्ध भाषाएं बोली समझी जाती हैं जिनका इतिहास संस्कृत से भी प्राचीन माना जाता है परंतु यह भी सत्य है कि भाषाई दृष्टि से अत्यंत समृद्ध होने के बावजूद भी ये भाषाएं देश की राष्ट्रभाषा नहीं बन सकती क्योंकि इनके प्रयोग का क्षेत्र सीमित है और इनको बोलने समझने वालों की संख्या भी हिंदी की तुलना में बहुत कम है। हमको राष्ट्रहित को ध्यान में रखकर सोचना चाहिए कि क्या दक्षिण व उत्तर-पूर्वी भाषी लोग देश के विभिन्न भागों में मात्र तमिल व अन्य प्रांतीय भारतीय भाषाओं के माध्यम से संपर्क स्थापित कर सकते हैं या नहीं ? उत्तर स्पष्ट है कि नहीं कर सकते परंतु एक हिंदी भाषी व्यक्ति देश के अधिकांश भू-भाग में सरलतापूर्वक हिंदी के माध्यम से संपर्क स्थापित कर सकता है।
5. हिंदी भाषियों को संकीर्णता ही हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने में सबसे बड़ी अड़चन रही है। दक्षिण भारतीय भाषाओं के प्रति उत्तर भारत में कोई जिज्ञासा नहीं है। आश्चर्य नहीं कि स्वाभिमानी दक्षिण भारतीय, जिनकी भाषाओं का एक लंबा इतिहास और अपना साहित्य है, हिंदी के प्रसार-प्रयत्नों को एक तरफा और हेकड़ी भरा कहकर उसका विरोध करे। अतः दक्षिण भारत में हिंदी के प्रसार के लिए एक महत्वपूर्ण कदम यह होगा कि उत्तर भारत में दक्षिण भारत की भाषाओं को भी मान्यता मिले।

6. हमको समझना होगा कि जब तक दक्षिण व उत्तर-पूर्वी राज्यों के निवासी हिंदी को नहीं अपनाते तब तक हिंदी को राष्ट्रभाषा नहीं बनाया जा सकता और हिंदी की दूरी दक्षिण व उत्तर-पूर्व के राज्यों से जग-जाहिर है। अतः हिंदी को विशाल ह्रदया बनकर न केवल दूसरी उत्तर भारतीय भाषाओं के शब्दों को बल्कि दक्षिण भारत की भाषाओं के शब्दों को भी अधिक से अधिक अपने अंदर समाहित करना होगा। साथ ही हमको चाहिए कि हिंदी के पाठ्यक्रम में अन्य भारतीय भाषाओं के शीर्षस्थ साहित्यकारों की श्रेष्ठ रचनाओं को भी स्थान दे। यही एकमात्र तरीका है जिससे हिंदी को दूसरी भाषाओं के निकट लाया जा सकता है। वैसे भी इन हिंदीतर भाषाओं के अनेक पदों की भाषा हिंदी की खड़ीबोली से लगभग उतनी ही दूर है जितनी रामचरितमानस की अवधि। ''वैष्णव जन तो तेने कहिये जे, पीड़ परायी जाणे रे'' का अर्थ समझने के लिए किस हिंदी भाषी को कुंजी उठानी होगी ? मीराबाई के भजन हिंदी में जितने लोकप्रिय उतने ही गुजराती में। बिहार के विद्यापति को हिंदी और बांग्ला भाषी दोनों ही अपना मानते हैं। वैसे भी पंजाबी निष्ठ हिंदी, गुजराती निष्ठ हिंदी, तमिल-तेलुगु निष्ठ हिंदी से ही हिंदी के लिए राष्ट्रभाषा के रास्ते खुलते हैं।
7. हिंदी के विकास में सर्वाधिक बाधा हिंदी के संस्कृतवादी पंडितों ने उत्पन्न की। उनकी सोच हिंदी के प्रति सदैव संकीर्ण व सांप्रदायिक ही रही। भाषा के शुद्धतावादी दृष्टिकोण ने हिंदी को क्लिष्ट बना दिया। हमारी पुरानी पीढ़ी तो हिंदी के नाम पर कोरी संस्कृत ही लिखती रही जिससे हिंदी को बहुत नुकसान पहुंचा है, मसलन कंप्यूटर को संगढ़क, हवाई-अड्डे के लिए विमान-पत्तनम, ट्रांसफर के लिए स्थानांतरण, रेल के लिए लौह पथ गामिनी या छुक-छुक वाहिनी, सिगरेट को धूम्रपान दंडिका जैसे शब्द हिंदी को न केवल संकुचित बल्कि हंसी का पात्र भी बनाते हैं। हमको समझना चाहिए कि भाषा की सरलता ही उसकी सबसे बड़ी शक्ति होती है परन्तु यह हिंदी का दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि हिंदी के इन संस्कृतवादी पंडितों ने हिंदी को संस्कृतनिष्ठ बनाकर उसकी आत्मा को ही मार दिया। हमको ध्यान रखना चाहिए कि अपनी भाषा की सरलता के कारण ही प्रेमचंद कथा-सम्राट कहलाते हैं जबकि जयशंकर प्रसाद अपनी कठिन भाषा के कारण मात्र किताबों या विश्वविद्यालयों के कवि बनकर रह गए। अतः यदि हमको हिंदी को राष्ट्रभाषा बनते देखना है तो हमको इसमें अनेक भाषाओं के शब्दों को समाहित करते हुए इसको अधिक से अधिक सरल बनाना होगा।
8. कहना अनुचित न होगा कि किसी भाषा की उन्नति व अवनति उसमे उपलब्ध रोज़गार के अवसरों पर निर्भर करती है। अतः भारत की सरकार को इस ओर ध्यान देना चाहिए और हिंदी में अधिक से अधिक रोज़गार के अवसर उपलब्ध करवाने चाहिए। आज आवश्यकता इस बात की है कि जब कभी भी अध्यापक भर्ती आए तो उसमे हिंदी-अध्यापकों के लिए पदों की संख्या अन्य विषयों के अपेक्षाकृत अधिक हो। हिंदी अनुवादक, हिंदी पत्रकारिता में भी अधिक से अधिक रोज़गार उपलब्ध करवाना चाहिए तथा हिंदी के क्षेत्र में रोज़गार के नवीन अवसरो की भी खोज करनी चाहिए जिससे अधिक से अधिक विद्यार्थी हिंदी के प्रति आकर्षित हों।

9. हिंदी के विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कदम यह होगा कि सरकारी विभागों की विभिन्न परीक्षाओं में हिंदी से संबंधित कुछ प्रश्न भी पूछे जाएं और सभी परीक्षाओं के प्रश्नपत्र भी हिंदी में उपलब्ध हों।
10. ऐसे पब्लिक स्कूलों की मान्यता तुरंत रद्द की जानी चाहिए जो बच्चों को हिंदी बोलने के नाम पर दंडित करते हैं। ऐसे स्कूलों में बच्चों के मन में बचपन से ही अंग्रेज़ी पढ़ाने के नाम पर हिंदी के प्रति घृणा की भावना भर दी जाती है। प्रोफेसर रमाकांत अग्निहोत्री के अनुसार, " भाषा की कक्षा में बच्चों को उनको अपनी भाषा में अभिव्यक्ति का ज़्यादा से ज़्यादा मौका दें। हर बच्चे को अपनी बात कहने का अवसर मिले, इस बात का विशेष ध्यान रखें और कक्षा के तीन चार बच्चों की आवाज़ को पूरी कक्षा की आवाज़ न समझें।" अतः ऐसे पब्लिक स्कूलों में अंग्रेज़ी के साथ-साथ बराबर से हिंदी पढ़ाने की भी व्यवस्था की जानी चाहिए तथा समय-समय पर हिंदी से संबंधित अनेक रंगारंग कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाना चाहिए जिससे बच्चों की मानसिकता हिंदी विरोधी न बने।
11. उच्च शिक्षा में हिंदी को प्रतिष्ठित करने के लिए यह आवश्यक है कि शोधग्रंथ अधिक से अधिक हिंदी में लिखे जाएं जिससे विभिन्न विषयों से संबंधित शब्दावली का विकास हिंदी में हो सके। इसके लिए यूजीसी को सख्त कदम उठाना होगा और देश के सभी प्रमुख संस्थाओ व केंद्रीय विश्वविद्यालयों के लिए दिशा-निर्देश जारी करके कहना होगा कि जो शोधार्थी अपने शोधग्रंथ हिंदी में लिखना चाहता है उनको इसकी अनुमति दी जाए। वर्तमान समय में अधिकतर केंद्रीय विश्वविद्यालयों में हिंदी के छात्रों के साथ भेदभाव पूर्ण व्यवहार किया जाता है और उनको शोध में हिंदी का प्रयोग करने की अनुमति नहीं दी जाती। यह एक तरह से हिंदी के साथ गुंडागर्दी या तानाशाही रवैया है जो हिंदी के विकास में बाधक है। जो शोधार्थी अंग्रेज़ी में शोधग्रंथ लिखना चाहें वे शौक से लिखे परंतु जो शोधार्थी हिंदी में लिखना चाहते है उनको रोकने का अधिकार किसी के पास नहीं होना चाहिए।
12. अक्सर हिंदी विरोधी कहते हैं कि चूंकि उच्च शिक्षा का माध्यम अंग्रेज़ी है और पुस्तकें भी अधिकांश अंग्रेज़ी में ही उपलब्ध हैं, इसकारण हिंदी को राष्ट्रभाषा नहीं बनाया जा सकता। उनकी यह बात काफी हद तक सही भी है परन्तु क्या हमे इस ज्ञान को आत्मसात करने के लिए अपनी भाषा को छोड़कर अंग्रेज़ी को अंगीकार कर लेना चाहिए ? या उस ज्ञान को अपनी भाषाओं में रूपांतरित करना चाहिए ? जैसाकि विश्व के अधिकांश विकसित देशों में होता है। विश्व में अनेक अंग्रेज़ी के मोह से मुक्त देश हैं जिनकी सफलता के कारण को समझना कठिन नहीं है। ऐसे देशों में अंग्रेज़ी के ज्ञान को स्वदेशी भाषाओं में रूपांतरित करके उस ज्ञान को जन-साधारण के लिए सुलभ किया जाता है, परंतु भारत में स्थिति इसके विपरीत है। यहां हर गली-नुक्कड़ पर ऐसे जानकर मिल जाते हैं जो अग्रेज़ी मात्र को ही प्रगति का पर्याय मानते हैं। ऐसे लोगो को समझना चाहिए कि उन्नति का स्रोत अंग्रेज़ी भाषा नहीं बल्कि वह ज्ञान है जिसको अन्य भाषाओं से पहले अंग्रेज़ी में अनूदित कर लिया गया, फिर अंग्रेज़ी से अनुदित करके चीनी, जापानी, कोरियाई आदि

भाषाओं में रूपांतरित करके इन देशों तक पहुंचाया गया। हमको सोचना चाहिए कि क्या भारतीय भाषाएं चीनी, जापानी आदि भाषाओं की तुलना में इतनी कमज़ोर है कि अंग्रेज़ी से ज्ञान को उनमें अनुदित न किया जा सके? हमको जापान, कोरिया, चीन जैसे देशों से सीखना चाहिए। आज चीन जिस तरह दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की कर रहा है, आश्चर्य नहीं इस शताब्दी के मध्य या अंत तक चीनी भाषा का विश्व में वहीं महत्व हो जो आज अंग्रेज़ी का है। अतः यह हमारी ज़िम्मेदारी है कि हम अपने-अपने विषयों की महत्वपूर्ण पुस्तकों का अनुवाद हिन्दी में करें।

13. अक्सर हिंदी विरोधी कहते हैं कि अंग्रेज़ी को अन्तर्राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त है तथा बहुत से लोग भारत से शिक्षा व रोज़गार की तलाश में विदेश भी जाते हैं। ऐसी स्थिति में निश्चय ही अंग्रेज़ी उनके लिए अधिक सहायक सिद्ध होती है। ऐसे लोगो को समझना चाहिए कि उच्च शिक्षा के लिए जितने छात्र भारत से अमेरिका (विदेश) जाते हैं लगभग उतने ही ताइवान, चीन, कोरिया जैसे देशों से भी जाते हैं जहां के विश्विद्यालयों में विज्ञान तथा तकनीकी विषय चीनी, कोरियाई जैसी निजी भाषाओं में पढ़ाए जाते हैं। हमारे अंग्रेजी दक्ष इंजीनियर उनको टी.वी, कार, ऐ.सी. बनाना नहीं सिखाते बल्कि वे हमको सिखाते हैं। इन देशों में जो छात्र उच्चतर अध्ययन या अन्य कारणों हेतु विदेश जाना चाहते हैं केवल वही अंग्रेज़ी पढ़ते हैं, शेष छात्र इस भार से लगभग मुक्त ही रहते हैं परंतु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि इन देशों में विदेशी साहित्य के प्रति रुचि का अभाव है। इन देशों में विदेशी साहित्य स्वदेशी भाषाओं में रूपांतरित करके पढ़ाया जाता है।

14. भाषाओं को गिनते समय प्राय: लोग लिपियों पर ध्यान देते हैं, परंतु लिपियां भाषाओं की भिन्नता का सदा सही माप नहीं देती। यदि भोजपुरी की अपनी लिपि होती तो वह भी पंजाबी, उर्दू की भांति अलग भाषा मानी जाती। शायद इसीकारण विनोबा भावे ने कई दशक पहले आग्रह किया था कि सभी भारतीय भाषाएं संस्कृत की लिपि यानी देवनागरी को अपनाएं परंतु उनका यह सुझाव आया गया हो गया क्योंकि इसके अन्तर्गत हिंदी और मराठी को छोड़कर अन्य सभी भाषाओं को झुकना पड़ता। समाधान ऐसा होना चाहिए कि देश के भाषाई समन्वय के लिए हर भाषा को किंचित त्याग करना पड़े। सभी भारतीय लिपियों की उत्पत्ति ब्राह्मी लिपि से हुई है। यदि हम इस ब्राह्मी लिपि का ऐसा आधुनिक सरलीकरण करे कि वह प्रचलित विभिन्न लिपियों का मिश्रज (हाइब्रिड) लगे तो उसे अपनाने में भिन्न भाषाओं को कम आपत्ति होगी। पर क्या अपनी लिपियों का लगाव छोड़ा जा सकेगा? प्रथम तो यह कि मिश्रज लिपि पूरी तरह अपरिचित अथवा विदेशी न होगी, दूसरे यदि कुछ कठिनाई होगी भी तो लाभ बड़े और दूरगामी होगे, यह भी ध्यान देने की बात है कि अंकों के मामले में ऐसा पहले ही हो चुका है – अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संसार की सभी लिपियों, अंकों के लिए अब 1,2,3,4... का प्रयोग करती हैं।

15. कहना गलत न होगा कि सम्पूर्ण विश्व में हिंदी के प्रचार-प्रसार में हिंदी टीवी और हिंदी सिनेमा का बहुत बड़ा योगदान है, परंतु अफसोस के साथ कहना पड़ रहा है कि आज बहुत से बड़े

अभिनेत्री-अभिनेता जिनको लोग अपना आदर्श मानते हैं, उनके जैसा दिखना व बोलना चाहते हैं, कैमरा हटते ही उनकी हिंदी न जाने कहां गुम हो जाती है ? यद्यपि वे रोटी तो हिंदी के नाम की खाते हैं परन्तु साक्षात्कार अंग्रेज़ी में देने में ही अपनी महानता समझते है। यदि हम हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर आसीन होते देखना है तो हमको ज़्यादा से ज़्यादा हिंदी सिनेमा के कलाकारों को सरल हिंदी बोलने तथा सिनेमा में हिंदी का प्रयोग के लिए प्रोत्साहित करना पड़ेगा।

16. आज भले ही हम हिंदी का तिरस्कार करें परंतु दुनिया हिंदी की शक्ति को पहचान गई है। हाल ही में अबुधाबी ने हिंदी को न्यायालय की तीसरी भाषा के रूप में मान्यता दी है। युनाइटेड नेशन में हिंदी को स्थाई भाषा का दर्जा दिए जाने की बात चल रही है। इसका सीधा सा अर्थ यह हुआ कि हिंदी एक विश्व भाषा के रूप में बहुत शीघ्रता से उभर रही है। इसका एक प्रमुख कारण भारत का विशाल बाज़ार है। वर्तमान समय में भारत सम्पूर्ण विश्व के समक्ष एक विशाल बाज़ार के रूप में उभर कर सामने आया है। अनेक विदेशी कंपनियों की नज़र भारत के विशाल बाज़ार पर है जहां उनको अपना सामान बेचकर मुनाफा कमाना है। अतः वे अपने प्रोडक्ट्स का प्रचार हिंदी भाषा में करती हैं जिससे वे भारत में अधिक से अधिक लोगों से संपर्क स्थापित संपर्क करके ज़्यादा से ज़्यादा लाभ हो सके।

निष्कर्ष

अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि यद्यपि दक्षिण व उत्तर-पूर्वी भाषाएं भी भारतीय भाषाएं ही हैं और इनका भी समुचित विकास होना चाहिए परन्तु दक्षिण भारतीय लोगों को भी इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि जब किसी तमिल व तेलुगु फिल्म का रीमेक हिंदी में बनता है तो उसकी प्रसिद्धि कई गुना अधिक बढ़ क्यों जाती है? गजनी,बाहुबली आदि अनेक फिल्में इसका उदाहरण हैं। इसके अतिरिक्त जब दक्षिण भारत के कलाकार हिंदी फिल्मों में अपनी प्रतिभा का नमूना पेश करते हैं तो उनकी प्रसिद्धि न केवल भारत में बल्कि विश्व स्तर पर हो जाती है। रजनीकांत, कमल हसन, रेखा, ए०आर०रहमान, मिथुन आदि अनेक कलाकार इसका उदाहरण हैं। कैटरीना कैफ जैसे अनेक कलाकारों ने हिंदी फिल्मी जगत में अपना एक मुकाम बनाने के लिए हिंदी को सीखा है। पूर्व राष्ट्रपति प्रवण मुखर्जी ने एक बार कहा था कि मै भारत का प्रधान मंत्री केवल इसलिए नहीं बन सका क्योंकि मुझको ठीक से हिंदी नहीं आती। इसके विपरीत सोनिया गांधी ने हिंदी सीखकर अपनी पार्टी को दो बार लोकसभा चुनावों में जीत दिलवाई। फिर भी जहां तक मेरी राय है तो हिंदी को किसी के ऊपर ज़बरदस्ती थोपने का प्रयास बिल्कुल नहीं करना चाहिए। यद्यपि मै हिंदी का विद्यार्थी हूं और हिंदी मेरी मातृभाषा है। मैंने अपनी पूरी शिक्षा हिंदी माध्यम से और हिंदी को एक विषय के रूप में चुन कर की है और मै हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित होते देखना चाहता हूं परंतु फिर भी देश की एकता व सभी देशवासियों की भावनाओं का सम्मान करते हुए मै हिंदी को किसी के ऊपर थोपने के पक्ष में बिल्कुल भी नहीं हूं। राष्ट्रभाषा हिंदी के संदर्भ में मेरा विचार यह है कि पिछले कुछ समय से हिंदी एक

राष्ट्रभाषा के रूप में देश में अपने आप स्थापित हो गई है। इसका श्रेय हिंदी सिनेमा व टेलीविजन को दिया जाना चाहिए। हिंदी के प्रसार-प्रचार में हिंदी टीवी और फिल्मों ने गजब का काम किया है लेकिन यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि हिंदी वालों ने ही हिंदी के साथ उस तरह से न्याय नहीं किया जैसा कि अंग्रेज़ी वालों ने किया है। एक ओर तो संकीर्ण मानसिकता के चक्कर में हमने भाषा को संस्कृतनिष्ठ बना दिया और फिर हमने अभी तक हिंदी में 'twinkle twinkle little star' जैसी कोई एक कविता भी नहीं रची जो हमारी पहचान विश्व में स्थापित कर सके। अतः सर्वप्रथम हमको हिंदी भाषा व इसके साहित्य को समृद्ध बनाना होगा जिससे इसको विश्व में पहचान मिले। अभी स्थिति जैसी है उसको फ़िलहाल वैसे ही रहने देना चाहिए और उस समय की प्रतीक्षा करनी चाहिए जब हिंदी पूरे देश विशेषकर दक्षिण व पूर्वोत्तर भारत के राज्यों में स्वतः स्वीकार कर ली जाएगी। हम आशा करते हैं कि ऐसा बहुत जल्द ही होगा। अभी हिंदी को थोपने से केवल हिंदी का ही नुकसान होगा क्योंकि तब इस मुद्दे को राजनैतिक रंग दे दिया जाएगा जो हिंदी के लिए बहुत नुकसान दायक सिद्ध होगा।

संदर्भ ग्रंथ-सूची

1. श्रीवास्तव लक्ष्मी, 2018, भारत में बहुभाषिकता तथा हिंदी भाषा शिक्षण की चुनौतियां एवं समाधान, भारतीय आधुनिक शिक्षा, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ,नई-दिल्ली,
2. कुमार सुमन, 2014, लघु, अल्पसंख्यक और आदिवासी भाषाएं तथा भाषा-नीति व बहुभाषिकता, भारतीय आधुनिक शिक्षा, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् , नई-दिल्ली,
3. सिंह रजनी, 2015, खड़ीबोली हिंदी का इतिहास और वर्तमान, भारतीय आधुनिक शिक्षा, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् , नई-दिल्ली,
4. राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् 2006, भारतीय भाषाओं का शिक्षण राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, एन.सी.ई.आर.टी., नई-दिल्ली,
5. सुमन क्षेमचंद्रा, 1948, राष्ट्रभाषा हिंदी, राजकमल प्रकाशन लिमिटेड, दिल्ली,
6. शर्मा रामविलास, 2017, भारत की भाषा समस्या, राजकमल प्रकाशन लिमिटेड, दिल्ली